फरीदाबाद
मजदूर समाचार

दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा

नई सीरीज नम्बर 88 — अक्टूबर 1995

इस अंक में

रक्तबीज बन गया है काम

काम बोझ है। एक धारदार बोझ। तन और मन को झटके से ज्यादा कष्ट देता है, हलाल करता है हरामी।

हम मजबूरी में काम करते हैं।

जीवन की कठिनाई कम करने की प्रक्रिया में हुये काम के जन्म ने हमें पशुओं से अलग किया। और, अपनी पैदाइश के सिलसिले के दौरान ही हमारे पुरखों ने काम के कष्ट कम करने के प्रयास आरम्भ कर दिये थे। पीढी-दर-पीढी ने अपनी कोशिशों के एक हिस्से को औजार-कौशल-ज्ञान रूपों में संचित करना शुरु किया और मनुष्यों का यह संचित श्रम काम के बोझ कम करने, काम के कष्ट घटाने का एक कारगर तरीका साबित होने लगा। लेकिन बराबरी वाले, समता वाले समूहों में रह रहे मानवों में स्वामियों के उदय ने इस सिलसिले को उलट दिया। अपने आराम, अपनी सुरक्षा और शान-शौकत के वास्ते स्वामियों ने दासों पर काम का बोझ बढाया तथा उसमें जलालत का जहर मिलाया। बोझ-कष्ट-जलालत की इस कड़वी खिचड़ी का बेगार प्रथा में पकना जारी रहा। किले-महल-मकबरे-मन्दिर आँसुओं और खून-पसीने के खण्डहर हैं।

मजदूरी प्रथा के आगमन के साथ ही साइन्स व टैक्नोलॉजी की मदद से काम को रक्तबीज बना दिया गया है, यह रक्तबीज बन गया है। जितना ज्यादा हम काम करते हैं उतना ही ज्यादा यह बढता जाता है और इसकी धार पैनी होती जाती है। काम - अधिक काम - और अधिक काम का चक्रव्यूह आदमी-औरत-बच्चों-बूढों को छलनी करता, लहुलुहान करता हुआ अपनी जकड़ कसता जा रहा है। काम से मुक्ति के लिये गणेश-पार्वती-नन्दी-शिवलिंग को हम आज चाहें जितना दूध पिलायें; खुदा को चाहें जितने बकरों की बलि दें; तांत्रिकों को चाहे जितनी दारू पिलायें – धार्मिक-सेक्युलर-अधार्मिक सब लीडर विक्रम के रथ पर सवार हो कर काम की महिमा गा रहे हैं और नव दुर्गा इस आधुनिक रक्तबीज की आरती उतार रही हैं।

प्रगति के राम रथ-चैतन्य रथम्-मिसाइल टैक्नोलॉजी के अनिवार्य परिणाम हैं : काम का सैलाब; सुपरसोनिक रफ्तार से काम; बेमतलब-अर्थहीन काम की बाढ़; उबाऊपन-नीरसता में काम द्वारा नित नये प्रतिमान-रिकार्ड स्थापित करना; मन-विवेक-व्यक्तित्व को कुचलने की काम की बढती जरूरतों द्वारा जलील करने की मानव क्षमता में इजाफे के लिये सूक्ष्म व विराट रूप में अवतारों को मात देते कम्प्यूटरों-कैमरों-टेप रिकार्डरों के जाल बुनना। फुर्सत डूब गई है इस सैलाब में। टाइम नहीं है और समय काटे नहीं कटता की गुत्थी में नित नई गाँठें लग रही हैं। अर्थहीनता-उबाऊपन-जलालत से पार पाने के लिये भोले की भाँग बच्चों की चीज हो गई है। पेट नहीं होता... बच्चे नहीं होते तो... कोई काम नहीं करता, कोई काम नहीं करती!

यह हमारी मजबूरी ही है कि काम पाने के लिये हम पापड़-दर-पापड़ बेलते हैं और नौकरी-चाकरी की सुरक्षा के लिये कष्ट तथा जलालत के पहाड़ ढोते हैं।

काम करना धर्म है; कर्म ही पूजा है; काम करने से तरक्की होती है; उज्ज्वल भविष्य के लिये काम करो; कम्पनी की - देश की प्रगति के लिये काम करो क्योंकि इनकी प्रगति में ही तुम्हारी खुशहाली है; आदि-आदि फिकरों पर ऐसे में ज्यादा माथा-पच्ची करने की जरूरत नहीं है। मैनेजमेंटों और सरकारों का जो नारा-मन्त्र-सूत्र है, "उत्पादन बढाओ या तबाह हो", वह वास्तव में यह है : मजदूरो और किसानो, उत्पादन बढ़ाते जाओ और तबाह होते जाओ! लेकिन लीडरों के भाषण सुनना स्कूली बच्चों की ही नहीं, कई बार बड़ों की भी मजबूरी होती है। वैसे, फैक्ट्रियों में तो यह साफ-साफ देखने में आ रहा है कि वर्क लोड थोपने में सुपरवाइजरों-छोटे मैनेजरों से ज्यादा रोल आज यूनियन लीडर अदा कर रहे हैं और इसके एवज में अन्य चीजों के अलावा मजदूरों की तनखा में से पैसे काट कर मैनेजमेन्टें, किसी फैक्ट्री में हर महीने तो किसी में सालाना, थैली या चैक रूप में यूनियन लीडरों को देती हैं।

हर जगह और हर समय काम का विरोध करना स्वाभाविक है, उचित है, जायज है, न्यायसंगत है। बेहतर वर्तमान और उज्ज्वल भविष्य के लिये काम का विरोध करना जरूरी है। काम से बचने के लिये मजदूर विभिन्न तरीके अपनाते हैं – इसके लिये अपराध-बोध फालतू की चीज है। कामचोरी को मैनेजमेंट-पक्ष गाली व बुराई के तौर पर इस कदर प्रचारित करता रहता है कि कई लोग इस प्रचार से प्रभावित हैं। हम किसी को तमगा-मैडल देने के पक्ष में नहीं हैं पर कामचोरी को सम्मान की नजर से देखने के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करना जरूरी समझते हैं। इस सन्दर्भ में अधिक महत्वपूर्ण है इस आधुनिक रक्तबीज से लड़ने के कारगर तरीकों पर विचार करना। इसके लिये काम के विरोध में मजदूरों द्वारा उठाये जाते कदमों की जानकारी का आदान-प्रदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पाठक हमें जो अनुभव-विचार भेजेंगे उन्हें हम अखबार के जरिये ज्यादा लोगों तक पहुँचाने की कोशिश करेंगे।

मोटे तौर पर काम का विरोध करने के दो तरीके हैं : व्यक्तिगत स्तर पर विरोध और सामुहिक प्रतिरोध।

अपने-अपने ढँग से अपने ऊपर काम के बोझ को कम करने तथा उसकी पैनी धार कुन्द करने के लिये अनगिनत निजी प्रयास हर समय होते रहते हैं। व्यक्तिगत स्तर पर काम के विरोध के जो तरीके अपनाये जाते हैं उन्हें तीन श्रेणियों में रख सकते हैं। कुछ तरीके ऐसे हैं जो एक पर काम का बोझ कम करने के संग-संग दूसरों पर भी बोझ कम करने में सहायक होते हैं। मसलन, प्रोडक्शन टारगेट निर्धारित करने के वास्ते मैनेजमेन्टें टाइम स्टडी आदि जो हथकन्डे अपनाती हैं तब टैस्ट केस बने वरकर द्वारा बरती जाती सावधानी, आँके जा रहे मजदूर द्वारा काम का कुशलता से विरोध अपने पर कम बोझ के संग-संग अन्य मजदूरों पर काम का बोझ कम रखने में भी सहायक होता है। व्यक्तिगत स्तर पर काम के विरोध के ऐसे तरीके सामुहिकता के लिये जमीन तैयार करने में योगदान देते हैं। लेकिन व्यक्तिगत स्तर पर काम का विरोध करने के वे तरीके भी हैं जो अपना बोझ दूसरों पर धकेल देते हैं। मसलन, बसों-गाड़ियों की कमी रहते धक्का-मुक्की कर चढ जाना; जहाँ लम्बी लाइनें लगती हैं वहाँ औरों का नम्बर काट कर अपने निपट लेना। अपने सहकर्मियों, अपने पड़ोसियों, अपने प्रियजनों अथवा अनजान लोगों पर धकेल कर अपने काम को हल्का करने के यह प्रयास चिक-चिक, मनमुटाव और झगड़ों को जन्म देते हैं। इतना ही नहीं, काम के बढते पहाड़ से कन्नी काटने के यह प्रयास बन्द गली में फँसने समान हैं क्योंकि यह रोज की तथा बार-बार दोहराई जाने वाली घटनायें हैं जो प्रतिदिन तथा प्रत्येक स्थान पर जरूरत के तौर पर अधिकाधिक उभर रही हैं – कभी-कभार की जरूरतें नहीं हैं यह कि चलो जैसे-तैसे ही सही एक बार में बला टली। दूसरों पर धकेल कर अपना बोझा हल्का करना इन हालात में दिन-ब-दिन नाकारा ही नहीं बल्कि ऐसा प्रयास करने वालों के लिये नुक्सानदायक भी साबित हो रहा है। व्यक्तिगत स्तर पर काम के विरोध के ऐसे तरीके सामुहिकता की राह में रोड़े बनते हैं और इन्हीं की श्रेणी में है लीडरी, व्यक्तिगत स्तर पर काम का विरोध करने की तीसरी श्रेणी जिसने संस्थागत रूप ग्रहण कर लिया है।

फैक्ट्रियों के इस शहर में जो कोई किसी फैक्ट्री में जब यूनियन लीडर बन जाते हैं तब वे आमतौर पर काम नहीं करते और मैनेजमेन्टें उनके काम को अन्य मजदूरों पर थोप देती हैं। काम नहीं करने वाले अथवा बराये नाम काम

(बाकी पेज दो पर)

सुनेर मार्बल्स उदयपुर

... हमारे क्षेत्र में सुनेर मार्बल्स नामक एक फैक्ट्री में हमने भी एक प्रयोग करके देखा है। उसमें ये था कि मजदूर नेता और मालिक की मिलीभगत से यूनियन काम करती थी। मजदूर सारे परेशान थे लेकिन आवाज नहीं उठा सकते थे। जूते, वर्दियाँ, साबुन, अटेन्डेन्स बोनस, बोनस और साल-भर की अन्य कई सुविधाओं को एक साथ इकट्ठा कर दिया जाता था। इन सब सुविधाओं के मिलने की तारीखें निकल जाने पर भी यूनियन मालिक से बात नहीं करती थी और न ही सुविधायें दिलवाती थी। इससे मजदूरों को नुकसान उठा कर एक-एक सुविधा के बारे में मालिक से समझौता करना पड़ता था। और यह प्रक्रिया छह साल से चल रही थी। इस बार हमने मजदूरों से कहा कि वो यूनियन के अध्यक्ष के नाम एक प्रार्थनापत्र लिखें और इन समस्याओं से तुरन्त निपटने की माँग करें ताकि मजदूरों को हमेशा होने वाले नुकसान से बचाया जा सके। मजदूरों ने ऐसा ही किया। 65 मजदूरों ने हस्ताक्षर किये। कुल मजदूर 125 थे। और भी बहुत सारे साथी हस्ताक्षर करना चाहते थे लेकिन जैसे ही कार्यकारिणी के नेताओं को इसकी भनक लगी तो उनमें खलबली मच गई और उन्होंने फोन करके अध्यक्ष को फैक्ट्री बुला लिया। इससे बाकी साथी हस्ताक्षर करने से रह गये लेकिन उनका पूरा समर्थन उन 65 मजदूरों के साथ था। इसलिये अध्यक्ष और उनके चमचों की एक नहीं चली और सात दिन में मजदूरों की सारी माँगें मन्जूर हो गई तथा सारी सुविधायें मिल गई। अध्यक्ष सहित सारे मजदूर नेताओं की उदासीनता खत्म हो गई और वे हर मजदूर के काम में तत्परता दिखाने लगे हैं। इस प्रयोग का मजदूरों में बहुत अच्छा असर हुआ लेकिन नेता उन साथियों को दबोचने के चक्कर में हैं जिन्होंने प्रार्थनापत्र लिख कर मजदूरों के हस्ताक्षर करवाये। परन्तु उस प्रार्थनापत्र से मजदूरों में ऐसी जागृति आई है कि वो अपनी फैक्ट्री के अलावा पूरे ओद्यौगिक क्षेत्र में इस प्रकार से काम करने की योजना बना रहे हैं और दूसरे मजदूरों का काफी अच्छा सहयोग मिल रहा है इसलिये सुनेर मार्बल्स के नेता उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं पा रहे हैं।

... उम्मीद है कि हमारे बीच इसी तरह विचारों एवं हमारे काम के अनुभवों का आदान-प्रदान होता रहेगा ताकि हम एक-दूसरे के अनुभव से कुछ सीखें और मजदूर आन्दोलन को गति प्रदान कर सकें और एक दिन जरूर अपने लक्ष्य को पा सकें। आपका अखबार पढ़ कर ऐसा लगा कि इस सड़ी-गली व्यवस्था के खिलाफ लड़ने वाले हम अकेले नहीं हैं। हमारी तरह और भी लोग अपने-अपने क्षेत्र में इसी तरह कोशिश कर रहे हैं और उनके अनुभव से हमें कुछ सीखना चाहिये। ... हम भी "इतिहास के सबक" नामक एक अखबार निकालते हैं। चूँकि मैं खुद भी एक मजदूर हूँ और मजदूरों में काम करता हूँ, मुझे मजदूरों वाला पन्ना अच्छा लगा इसलिये आपको खत लिखने को मन हुआ। ...

3.9.95 -एक मजदूर, उदयपुर (राजस्थान)

रक्तबीज बन गया है काम..... (पेज एक का शेष)

करने वाले लीडरों को मैनेजमेन्टें वेतन के संग प्रोडक्शन इनसैन्टिव भी देती हैं। इतना ही होता तो मजदूर खून का घूँट पी कर भी लीडर बने अपने सहकर्मियों द्वारा थोड़ी मौज-मस्ती पर सब्र कर सकते थे। लेकिन यहाँ तो प्रत्येक मैनेजमेन्ट - यूनियन एग्रीमेन्ट में मजदूरों पर वर्क लोड बढाया जाता है। मजदूरों पर कन्ट्रोल बनाये रखने और वर्क लोड बढाने के लिये मैनेजमेन्टें अब यूनियन लीडरों को पालती-पोसती हैं। मैनेजमेन्ट के पक्ष में काम करना तथा मजदूरों केहमदर्द होने के दिखावे करना बाजीगरी की माँग करता है और कलाबाजी आज लीडरी की चारित्रिकता बन गई है। तालियाँ बजाने वाले, जयकारे लगाने वाले जुटाने के लिये कुछ वरकरों को दादागिरी की राह काम से छुट्टी दिलाना और कुछ को लाइट जॉब पर लगवाना लीडरी की सामान्य तिकड़में हैं। इक्के-दुक्के को छोड़ दें तो मजदूरों के बीच से बनने वाले लीडरों की यह बाजीगरी आम मजदूरों को ज्यादा दिन उल्लू नहीं बना पाती और आज के लीडर कल फिर वरकर बन कर काम की चक्की में पिसने को मजबूर होते हैं। फिर भी, चार दिन की चाँदनी का व्यापक आकर्षण है। यूनियन चुनावों की चौंकाने वाली राजनीति काम से बचने व मैनेजमेन्ट के टुकड़ों के आकर्षण की तस्दीक करती है। ऐसे में काम के आधुनिक रक्तबीज के कारगर विरोध के वास्ते इस या उस लीडर का ही नहीं बल्कि लीडरी का विरोध करना आवश्यक बन गया है।

काम के सामुहिक प्रतिरोध का तरीका, मिल-जुल कर किया जाने वाला काम का विरोध आमतौर पर मजदूरों के हित में होता है – और कारगर साबित होता है। प्रोडक्शन प्रोसेस में चेन सिस्टम, फैक्ट्री के अन्दर और फैक्ट्रियों के बीच चेन सिस्टम, एक फैक्ट्री में एक आपरेशन वाले वरकरों तक द्वारा काम के सामुहिक प्रतिरोध को व्यापक असर वाला बनाता है। आज थोड़े से मजदूरों द्वारा मिल-जुल कर किये जाते काम के विरोध में भी बड़ी तादाद पर काम के बोझ को कम करने की क्षमता है। लेकिन यहाँ भी कुछ दरारें थी और कुछ मैनेजमेन्टों ने डाल दी हैं। कैजुअल व ठेकेदारों के वरकरों पर परमानेन्ट वरकरों द्वारा सामुहिक तौर से धकेला जाता अपना बोझा मजदूरों के बीच कटुता को बढाता है। मैनेजमेन्टों और यूनियन लीडरों द्वारा कैजुअल व ठेकेदारों के वरकरों के अस्तित्व से आँखें मूँदे रहना तथा अक्सर इनकी बलि देना और अपने क्षुद्र व तात्कालिक हित में परमानेन्ट मजदूरों द्वारा इसमें दी जाती सहमती एक तरफ जहाँ परमानेन्ट वरकरों को ही समय के साथ डसती जा रही है, उनकी संख्या को घटाती जा रही है वहीं मजदूरों के बीच अजनबीपन की ही नहीं बल्कि शत्रुता की दीवारें भी खड़ी करती है। इधर मैनेजमेन्टें एक और दरार डाल रही हैं : वर्तमान में मजदूरों के प्रतिरोध को कम करने के लिये मैनेजमेन्टें नये, भविष्य में भर्ती होने वाले वरकरों को बलि के बकरे बनाने लगी हैं। अपने बोझ को कम करने के लिये परमानेन्ट मजदूरों की इसमें सहमती घातक फसल की खेती करना है।

पब्लिक डीलिंग और पब्लिक सर्विसिज के वरकरों द्वारा काम का व्यक्तिगत स्तर पर और सामुहिक तौर पर विरोध, दोनों ही कुछ अतिरिक्त जटिलता लिये हैं। व्यापक मजदूर एकता के वास्ते इन क्षेत्रों के मजदूरों के लिये कोरिया के रेलवे मजदूरों ने एक मिसाल पेश की है। आन्दोलन कर रहे कोरियाई रेलवे वरकरों ने ट्रेनें सुचारु रूप से चलाई और मार्च 1989 में 25 लाख यात्रियों को मुफ्त यात्रा करवा कर सरकार को हिला दिया।

एल के जी - यू के जी - शिशु मन्दिरों के जाल से बचपने तक को काम के बोझ से लहुलुहान कर रहे इस आधुनिक रक्तबीज का वध करने के लिये हमें किसी काली पर दूध-रक्त-दारू के खप्पर चढाने की जरूरत नहीं है। हमारे पास व्यक्तिगत स्तर के काम के विरोध के वे तरीके जो समूह के भी हित में होते हैं और मजदूरों की व्यापक एकता के लिये राह बनाते काम के सामुहिक प्रतिरोध बेहतर वर्तमान के संग-संग उज्ज्वल भविष्य की कुँजी हैं। हजारों वर्ष पहले टूटी समता, बराबरी की कड़ी को हमारे यह कदम वर्तमान में विश्व आधार पर जोड़ सकते हैं। इस प्रकार निखर कर पीढ़ी-दर-पीढ़ी के औजार-कौशल-ज्ञान रूपों में संचित प्रयास, हमारा संचित श्रम काम के बोझ को घटाने की राह पर बढ सकता है। घटता काम और बढती फुर्सत आधुनिक रक्तबीज के वध की राह है।

असुरक्षित गार्ड

... ठेकेदारों द्वारा किया जा रहा शोषण दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। "मजदूर जंग" पत्रिका में छपी-खबरों के अनुसार सरमायेदारों का कहना है कि भारत में मजदूर कामचोर हो गये हैं इसलिये मजदूरों में वर्क कल्चर पैदा करने के लिये वे ठेकेदारों के जरिये काम करवाना बढा रहे हैं। किसी भी कम्पनी में कम्पनी की तरफ से मजदूर नहीं रखना... संगठित मजदूरों में कुछ दलाल संगठन इसके पक्ष में हैं। सरकार स्वयं इसे प्रोत्साहन दे रही है... ठेकेदार मजदूरों को इतना पैसा देते हैं कि अकेले जीवनयापन करना ही मुश्किल है, परिवार का पालन कैसे कर सकते हैं...

बल्लबगढ़ सेक्टर 4R कोठी न. 51 में "गार्ड्स सेक्युरिटी सर्विस" नाम की संस्था है... सादे कागज, वाउचर तथा अन्य कई कागजों पर नाजायज ढँग से हस्ताक्षर करवा कर तब किसी को फैक्ट्री में गार्ड की ड्यूटी देते हैं। न्यूनतम वेतन देना तो दूर रहा, 700-800 पर ड्यूटी करा रहे हैं। साप्ताहिक अवकाश या अन्य कोई भी छुट्टी नहीं देते। ई एस आई के पैसे काटते हुये भी किसी को ई एस आई कार्ड नहीं देते... रजिस्टर पर पूरा वेतन नहीं भरते, वेतन देने के बाद रजिस्टर पर मनमाने पैसे चढा देते हैं। मजबूरी के कारण कोई भी गार्ड इस सब का विरोध नहीं करता... लेबर डिपार्टमेन्ट भी कोई कार्रवाई नहीं करती। ऐसी हालत चलती रही तो एक दिन बन्धुआ मजदूर जैसे काम करना होगा।

3.8.95 – फैक्ट्री से निष्कासित एक मजदूर

फैक्ट्रियों में तथा बस्तियों में सामुहिक कदमों की जानकारी को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाना हमारे लिये खुशी का काम है। अगर आपके पास ऐसी जानकारी है तो वह हमें दें।

हरियाणा की नई कहानी

गाँव-गाँव बिजली गिरी

घर-घर भर गया पानी

★ प्राचीन काल में कन्द-मूल बटोरने और शिकार की अवस्था में ही मनुष्यों ने अनुभवों व उनके मूल्यांकन से प्रकृति में पेड़-पौधों तथा जीव-जन्तुओं के जीवन-चक्रों और उनमें प्रजनन जैसे दौरों का अपने लिये महत्व पहचानना शुरु कर दिया था। वर्ष के किस खण्ड में, किस अवस्था में किस जानवर का शिकार नहीं करना है, शहद का छत्ता कब नहीं तोड़ना है, कौनसा कन्द-मूल कब नहीं बटोरना है, महुआ का पेड़ नहीं काटना है आदि-आदि ने रस्मों-रिवाजों का रूप धारण किया। कृषि केमहत्वपूर्ण बनने पर "एकादशी से पहले गन्ना तोड़ना पाप है", "गोवध महापाप है" आदि इसी सिलसिले की अगली कड़ी बने।

★ मकान, तालाब, नहर, सड़क, पुल की मरम्मत के महत्व की मानव द्वारा पहचान ने "ए स्टिच इन टाइम सेवज नाइन" (समय पर एक टाँका, नौ की बचत करता है) जैसे मुहावरों को काफी पहले जन्म दे दिया था।

★ हर चीज घिसती है और एक समय ऐसा आता है कि उसके स्थान पर नई चीज जरूरी बन जाती है। मनुष्यों द्वारा इसके महत्व की पहचान उन्हें बैल के काम करने के दौरान ही बछड़ा पालने की ओर ले गई।

मरम्मत - घिसाई - पुनरुत्पादन, रिपेयर - डेप्रिशियेशन - रिप्रोडक्शन अलग-अलग होते हुये भी परस्पर जुड़े हैं और मजदूरी प्रथा में तो हर क्षेत्र में इन्होंने विज्ञान का रूप ले लिया है।

लेकिन :

★ राजस्थान में गरीब बच्चों को साहब बनने की शिक्षा देने वाले विद्यालय का छात्रावास ताश के पत्तों के महल की तरह ढह गया। कई बच्चे मलबे में दब कर मर गये।

★ विशेषज्ञ समितियों की रिपोर्ट-दर-रिपोर्ट रेलवे के सिग्नल सिस्टम को दुरुस्त करने की सिफारिश करती रही हैं। फिरोजाबाद हादसे के बाद फिर वही बात।

★ तमिल नाडु में शिशुओं की गाड़ी मुड़ते समय तालाब में पलट गई। कई शिशु डूब गये।

★ धनबाद क्षेत्र में कोयला खानों में फिर पानी भर गया। एक खान में तो चार में से तीन लिफ्ट भी खराब पड़ी थी। डेढ सौ मजदूर मर गये हैं।

★ देसां मं देस हरियाणा में नहरों व ड्रेनों से मिट्टी निकालने के पैसे लीडरों-ठेकेदारों-अफसरों ने खा कर पानी की नहरों-नालों की राहों को शहरों-गाँवों को जाने की राहों में बदला तथा एक और प्राकृतिक विपदा लाये हैं। गाँवों-शहरों में "पाई-पाई जोड़ मैंने थैलियाँ लुटाई रे" वाले हालात पैदा किये गये हैं। देवताओं का दूध पिलाने में विपदा के मारे लोग किसी से पीछे नहीं रहे हैं परन्तु इससे अचानक विशाल आबादी द्वारा माया का मोह त्यागने का कोई दैवी चमत्कार नहीं हुआ है। पेट काट कर खड़ी की दो-दो ईंटें लोगों ने लुटाई नहीं हैं बल्कि वर्तमान व्यवस्था ने उन्हें लूट लिया है, डुबो दिया है।

प्रत्येक समाज व्यवस्था को बनाये रखने के लिये उसके भौतिक आधार, उसकी मेटेरियल बेसिस का अब तक सर्वोपरि महत्व रहा है। लायक-नालायक शासक का मापदण्ड इस सर्वोपरि महत्व की पहचान तथा इसके अनुरूप कार्य द्वारा निर्धारित हुआ है। व्यक्ति-विशेष के गुण-अवगुण, क्षमता-अक्षमता की सीमाओं से पार पाने के लिये रस्म-रिवाज-कर्मकाण्ड और तन्त्र के अन्य अंगों का ताना-बाना समाज व्यवस्थाओं ने बुना है। वर्तमान व्यवस्था भी शिक्षा-दीक्षा, मन्त्री-सन्त्री-जेल-कचहरी के संग-संग आडिट - विजिलैन्स - सी बी आई - आई बी - एम आई - रॉ - सी आई ए - इन्टरपोल का ताना - बाना बुनने में किसी प्रकार की कमी नहीं छोड़ रही है। लेकिन मानव समाज में सतत चलते भौतिक व मनोगत परिवर्तनों ने विगत में काँइया से काँइया शासकों और उनके क्रूर से क्रूर व चुस्त से चुस्त तन्त्रों को नाकारा कर पहले दास प्रथा व फिर बेगार प्रथा को मिट्टी में मिला दिया। वैसी ही परिस्थितियाँ अब मजदूरी प्रथा के सम्बन्ध में बन रही हैं। लीडरों ठेकेदारों-अफसरों की लापरवाही व भ्रष्ट आचरण किस प्रकार इस व्यवस्था के भौतिक आधार को बर्बाद कर रहे हैं इसके बारे में इस व्यवस्था के ऋषि-महर्षि-प्रोफेसर-पत्रकार पन्ने-दर-पन्ने काले कर रहे हैं। लेकिन यह सब छाती पीटने और मजदूरी प्रथा के खोखला हो जाने पर पर्दा डालने से अधिक कुछ नहीं हैं। कुटिल शिरोमणियों की लाचारी का यही अर्थ है कि ध्याड़ी पर काम करवाना उनके बूते से बाहर होता जा रहा है।

नोट :- शीर्षक हमने हरियाणा सरकार के प्रोपगेन्डा विभाग की एक तुकबन्दी में तीन शब्द जोड़ कर बनाया है।■

देशी-विदेशी की गुत्थी

औरत हो चाहे आदमी, पशु हो चाहे पेड़-पौधा, पकवान हो चाहे वस्त्र-परिधान – देशी-विदेशी का गड़बड़झाला आज हर चीज में उछाल पर है। भारत हो चाहे अमरीका, चीन हो चाहे जर्मनी, बुरुन्डी हो चाहे इंग्लैन्ड – हर जगह आज बिजली की गति से घूमता देशी-विदेशी का घनचक्कर किसी भी अफलातून का सिर चकरा सकता है। अमरीका में संसद इस पर गूढ़-गम्भीर बहस करती है कि एक कार में लगे पुर्जों की कीमत या उनकी गिनती अथवा उनके वजन में से किसे व कितना महत्व दे कर उस कार को देशी अथवा विदेशी होने का सर्टिफिकेट दिया जाये। वैसे यह आम जानकारी की बात है कि देशी अथवा विदेशी का पैमाना तय करने वाला कानून बनाने वाली अमरीकी संसद के सौ फीसदी, हन्ड्रेड परसैन्ट सदस्य उन लोगों के वारिस हैं जिनमें से हर कोई इन 505 साल में बाहर के देशों - महाद्वीपों से अमरीका जा कर बसे! अटपटा-अजूबा-बेतुका-अर्थहीन, जो चाहें कहिये पर वर्तमान की इस महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति पर गम्भीरता से विचार करने के लिये यह कारण भी ध्यान में रखिये कि देशी-विदेशी का यह कान-फोड़ शोर ऐसे समय में बढ रहा है जब क्षेत्रों के भेद मिटने व मिटाने की प्रक्रिया ही नहीं बल्कि क्रियायें भी गति पकड़ रही हैं।

विचार-यात्रा आरम्भ करने के लिये किसी कम्पनी या फैक्ट्री के देशी अथवा विदेशी होने के प्रश्न को लेते हैं। कोई फैक्ट्री देशी है या विदेशी यह तय करने के लिये उस पर मालिकाना किसका है यह मापदण्ड अपनायें या इसे कि उसकी मशीनरी कहाँ से आई है अथवा उसकी टैक्नोलॉजी कहाँ की है या फिर उसका ईंधन व कच्चा माल कहाँ से प्राप्त होता है अथवा उसके प्रोडक्शन की बिक्री कहाँ होती है? सोचिये। पूरी चीज तो शायद ही कोई ली जा सके इसलिये हर एक के परसैन्टेज पर ही ध्यान केन्द्रित कीजिये और अमरीकी सांसदों की तरह इस जटिल प्रश्न पर माथा-पच्ची कीजिये कि परसैन्टेजों के किस अनुपात को देशी-विदेशी की गुत्थी सुलझाने के लिये स्वीकार किया जाये।

दुनियाँ-भर में लिमिटेड कम्पनियों के छा जाने से मालिकों का लोप-विलोप हो गया है परन्तु फिर भी मालिकाने का महत्व बना हुआ है इसलिये देशी-विदेशी की जटिल गाँठ खोलने के लिये कम्पनी के मालिकाने पर एक नजर डालते हैं। सीधी-सी बात लगती है कि जिसका पैसा लगा है उसका मालिकाना और देशी पैसा लगा है तो देशी कम्पनी, विदेशी पैसा लगा है तो विदेशी कम्पनी। लेकिन पैसा देशी है या विदेशी यह कैसे तय करें? लिमिटेड कम्पनी के पैसों का स्रोत उसके शेयर तथा शेयरों की कुल रकम से पाँच-दस गुणा ज्यादा कर्ज होता है। शेयरों व कर्ज में एक उल्लेखनीय अंश बैंकों का होता है। बैंकों में पैसे देशी होते हैं या विदेशी? सरकारों व बैंकों द्वारा दुनियाँ-भर से कर्ज उठाया जाता है। फिर भी रुपया तो भारतीय ही है ना?! नहीं दोस्त, पैसे का संचित श्रम के पैमाने व प्रतीक के तौर पर जो उपयोग होता है वह अब विनिमय दर - एक्सचेंज रेट, करेन्सी बास्केट - मुद्राओं की टोकरी में समा गया है। इस पर थोड़ा सोचने के लिये चलो बैंकों व सरकारों के पैसों के देशीपन-विदेशीपन के प्रश्न को एक मिनट के लिये छोड़ देते हैं। आज बम्बई - हाँगकाँग - टोक्यो - पेरिस - न्यू यार्क - लन्दन -... के शेयर बाजारों को सैटेलाइटों और कम्प्यूटरों के कई जाल जोड़े हुये हैं। किसी कम्पनी के शेयरों का हस्तान्तरण बम्बई से टोक्यो और फिर न्यू यार्क होते हुये पेरिस के किसी ग्रुप के हाथों में कब हो जाये यह अब मिनटों में होने वाली घटनाओं के दायरे में दाखिल हो रहा है। तो क्या एक फैक्ट्री के मालिकाने में एक दिन में दस परिवर्तन होने लगेंगे???

अगड़म बगड़म बम्बे बो... पैसे की राष्ट्रीयता पता करने के प्रयास को चाहें तो निन्यानवे के फेर में पड़ना कह लीजिये पर कोई कम्पनी - कोई फैक्ट्री देशी है या विदेशी की गुत्थी और उलझ गई है। तथास्तु।।■

"1916 में गठित भारतीय औद्योगिक आयोग ने सुझाव दिया कि सरकार को देश में औद्योगिकीकरण में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिये। तदानुसार, 1922 में सरकार ने रेलों का प्रवन्ध अपने हाथ में ले लिया।"

(हरियाणा सरकार के श्रम विभाग द्वारा प्रकाशित पत्रिका, "हरियाणा लेबर जरनल" के जनवरी-मार्च1995 अंक में।)

डरे-दवों का कमाल

कुछ समय से बाटा मैनेजमेन्ट ने फरीदाबाद फैक्ट्री में दमन का नँगा नाच शुरु कर आतंक का माहौल बना रखा है। तनखा काट, सस्पैन्ड-डिसमिस कर मैनेजमेन्ट ने मजदूरों पर वर्क लोड थोपने का सिलसिला शुरु किया हुआ है। आम धारणा यह बन गई कि बाटा मजदूर डर गये हैं, दव गये हैं। ऐसे में मैनेजमेन्ट के पक्षधर खुलेआम प्रोडक्शन बढाओ - प्रोडक्शन वढाओ के भाषण देने लगे। मजदूरों द्वारा विरोध में खुल कर चूँ भी नहीं करने से मैनेजमेन्ट और उसके पक्षधरों का हौसला सातवें आसमान पर चढ गया। बाटा मैनेजमेन्ट ने ईस्ट इंडिया मैनेजमेन्ट की तर्ज पर काम में नुक्स के नाम पर वरकरों का दो दिन - चार दिन गेट वन्द करना शुरु कर दिया। मैटेरियल नहीं होने पर मजदूरों का वेतन काटना भी मैनेजमेन्ट ने शुरु किया। मैनेजमेन्ट की ताकत के मद में फूल कर कुप्पा हुये उसके पक्षधरों ने समझौतों व फैसलों में निर्लज्जता के नये रिकार्ड बनाये। इस प्रकार बाटा फैक्ट्री में सरमाये के विकास की राह से रोड़े हटाये जाने लगे।

लेकिन, डरे-दबे बाटा मजदूरों ने 20 सितम्बर को मैनेजमेन्ट को सातवें आसमान से जमीन पर उतार दिया। 20 सितम्बर को सुबह 9 बजे हवाई चप्पल डिपार्टमेन्ट के मजदूरों ने प्रोडक्शन मैनेजर को घेरा। तनखा काटने पर सवाल-जवाब और हूटिंग। डरे-दबों के इन सामुहिक तेवरों से साहब लोग उबर ही रहे थे कि जूतों की आटोमैटिक लाइनों पर 11 बजे प्रोडक्शन मैनेजर को मजदूरों ने फिर घेर लिया। वेतन काटने पर फिर हूटिंग और सवाल-जवाब। डरे-दबे मजदूरों के इन सामुहिक कदमों से डर कर जनरल मैनेजर ने शुक्रवार, 22 सितम्बर का कार्यस्थल का अपना साप्ताहिक दौरा कैन्सल कर दिया।■

प्रत्येक मैनेजमेन्ट कम से कम वेतन पर अधिक से अधिक काम करवाने की हर समय कोशिश करती है। प्रत्येक मजदूर हर समय काम कम और वेतन ज्यादा की कोशिश करता है। मजदूरी प्रथा सदा से नहीं है परन्तु जव तक यह है तब तक उपरोक्त कारण से मैनेजमेन्टों और मजदूरों के बीच लगातार खींचा-तान होना अनिवार्य है। और, प्रत्येक कदम पर तथा प्रत्येक क्षण मजदूर-पक्ष और मैनेजमेन्ट-पक्ष के बीच चलती इस रस्साकसी में झुकाव तथा उसकी मात्रा इन पक्षों की ताकत में फर्क द्वारा तय होती है! अतः मजदूरों और मैनेजमेन्टों के बीच सौहार्द एवं सद्भावपूर्ण सम्बन्धों की बातें बकवास और धोखाधड़ी के सिवा और कुछ नहीं हो सकती।

पुलिस

डालचन्द की गाड़ी पर राम बहादुर काम करता था। दो महीने बाद डालचन्द ने उसकी मजदूरी के830 रुपये देने से इनकार कर दिया। राम बहादुर ने राजीव गाँधी चौक के निकट पुलिस चौकी में इसकी शिकायत की। पुलिस ने डालचन्द को चौकी में बुला कर राम बहादुर को 600 रुपये दिलाये। डालचन्द के जाने के बाद दरोगा किशन दत्त ने राम बहादुर को रोक लिया और 600 रुपये वापस माँग लिये। थानेदार ने उसे 290 रुपये लौटा दिये और 310 रुपये खुद रख लिये। राम बहादुर ने अपनी दिक्कतें बताते हुये कुछ और पैसे माँगे तो थानेदार ने उसे पीट कर भगा दिया।

राम बहादुर ने डी एस पी से शिकायत की तो साहब ने उसे वापस उसी पुलिस चौकी भेज दिया। चौकी में पुलिस ने तब राम बहादुर की बहुत पिटाई की।

पुलिस द्वारा पैसे छीनने और मार-पीट करने की शिकायत राम बहादुर ने फरीदाबाद के एस पी से की। बड़े साहब ने राम बहादुर को यह कह कर टरका दिया है कि तुम्हारा काम हो जायेगा।

(जानकारी हमने 29 अगस्त के नवभारत टाइम्स से ली है।)

कैजुअलों से रिश्वत

24 सैक्टर स्थित **हिन्दुस्तान वायर्स** में दो तरह के कैजुअल वरकर भर्ती किये जाते हैं – दो महीने वाले और छह महीने वाले। दो महीने कैजुअल वाली भर्ती की पर्चियाँ 200 रुपये में और 6 महीने कैजुअल वाली 500 रुपये में बेची जाती हैं। दो महीने वाले कैजुअल वरकर से हिन्दुस्तान वायर्स में लगने के दूसरे दिन फैक्ट्री में ही पैसे लिये जाते हैं।

6 सैक्टर स्थित **ओरियन्ट फैन** में दो महीने की कैजुअल भर्ती की पर्चियाँ 200 रुपये में बेची जाती हैं।

सरकारी डॉक्टरों की डिमान्डें

हरियाणा सरकार के डॉक्टरों द्वारा राज्य के पाँचवे वेतन आयोग के सम्मुख रखी वेतन सम्बन्धी डिमान्डें मजदूरी प्रथा में सही दिशा में एक कदम है। कुछ डिमान्डें यह हैं :

- भर्ती के समय डॉक्टर को वर्तमान में जो 2200 रुपये वेतन दिया जाता है उसे 16,000 किया जाये।
- निजी प्रैक्टिस नहीं करने की एवज में वेतन का आधा भत्ते के रूप में दिया जाये।
- विना कार या स्कूटर वाले डॉक्टरों को आवागमन भत्ता 750 रुपये महीना।
- कार्यस्थल पर कीटाणुओं के हमले आदि खतरों के दृष्टिगत बीमे की किस्त भरने के लिये 500 रुपये प्रतिमाह रिस्क अलाउन्स।
- कार्य के लिहाज से आवश्यक पढाई करते रहने के लिये 1000 रुपये भत्ता प्रतिमाह।
- बच्चों की शिक्षा के लिये विद्यालय स्तर पर भत्ता 750 रुपये प्रति बच्चा प्रतिमाह।
- मकान भत्ता वेतन का 15 से 30 परसैन्ट।
- शहरों में रहने की क्षतिपूर्ति के वास्ते भत्ता 300 से 500 रुपये प्रतिमाह।
- देहातों में रहने की क्षतिपूर्ति के वास्ते वर्तमान के 250 रुपये भत्ते को 1000 रुपये प्रतिमाह करना।
- ई एस आई भत्ता बढा कर 1000 रुपये प्रतिमाह किया जाये।

इसके अलावा हरियाणा के सरकारी डॉक्टरों ने रिहाइश व कार्यस्थल पर टेलीफोन; साफ-सुथरे उपयुक्त कार्यस्थल; रिटायर होने के पश्चात भी यात्रा भत्ता आदि डिमान्डें रखी हैं।

मजदूरी प्रथा में इन मेडिकल वरकरों ने यह काफी उपयुक्त डिमान्डें की हैं। अन्य मजदूरों के लिये मेडिकल वरकरों के इस कदम में उचित सबक हैं।

(जानकारी हमने 'हरियाणा डॉक्टर्स वॉयस' के 16 सितम्बर अंक से ली है।)■

अहले-सियासत कब तक होगा मुल्क में ये सब, कुछ तो बता
अहले-दौलत खून पियेंगे, मुफलिस पत्थर खायेंगे।
कौन मरा, किसका भाई था, किस माँ का वो बेटा था
अहले-सियासत का मकसद तो बस दँगे करवाना है।
रहबर बन जाओगे तुम देस के
मुफलिसों के घर जलाना सीख लो।

– मनु, गाजियाबाद

दस हजार की बजाय इस बार भी हम पाँच हजार प्रतियाँ ही फ्री बाँट रहे हैं। दो हजार मजदूर अगर हर महीने दो-दो रुपये दें तो पहले की तरह दस हजार प्रतियाँ फ्री बँट सकेंगी।

---

19 अक्टूबर को सुबह दस बजे, 20 को शाम 5 बजे और 21 अक्टूबर को रात 8 बजे इस अखबार के अक्टूबर अंक पर मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी में चर्चा होगी। हर कोई इसमें भाग ले सकता है।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं सम्पादक शेर सिंह के लिए जे० के० ऑफसैट दिल्ली से मुद्रित किया। RN 42233 **पोस्टल रजिस्ट्रेशन** L/HR/FBD/73
सौरभ लेजर टाइपसैटर्स, बी – 548 नेहरू ग्राउंड, फरीदाबाद द्वारा टाइपसैट।